क्या स्वास्थ्य

मौलिक अधिकार

होना चाहिए?

BHARAT GYAN VIGYAN SAMITI

प्रोफेसर डॉ. टी. सुंदररामण

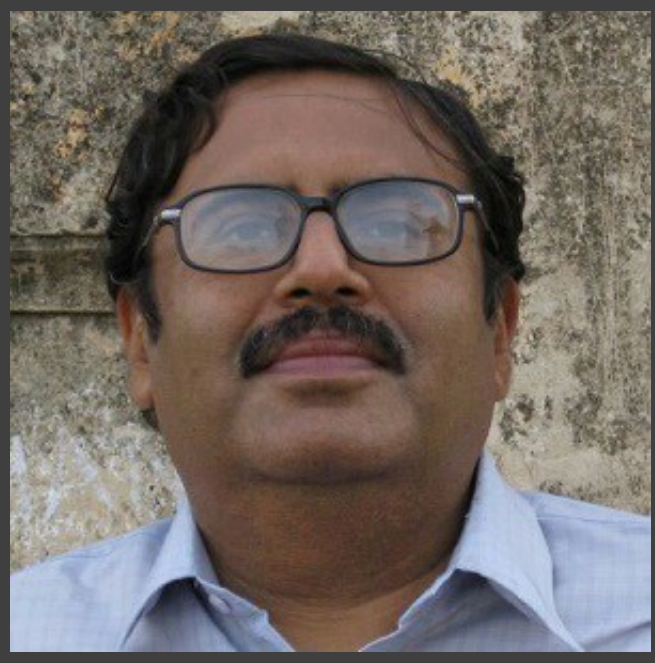

डॉ. अभय शुक्ला

प्रस्तुत लेख जन स्वास्थ्य विशेषज्ञों **प्रोफेसर डॉ. टी. सुंदररामण** (वैश्विक संयोजक जन स्वास्थ्य अभियान व पूर्व कार्यकारी निदेशक, राष्ट्रीय स्वास्थ्य प्रणाली स्रोत केन्द्र) और **डॉ. अभय शुक्ला** (जन स्वास्थ्य अभियान, राष्ट्रीय संयोजक) के साथ राम्या कन्नन की बातचीत पर आधारित है।

हिन्दी रूपान्तरण को बेहतर रूप से समझने के लिए लेख के मूलभाव से छेड़छाड़ किए बिना कुछ शब्दों या वाक्यों में मामूली फेरबदल किया गया है।

8 मई, 2020 के "दी हिन्दु" समाचार पत्र से साभार।

मूल आलेख के लिए नीचे दिए गए लिंक पर जाएं:

https://www.thehindu.com/opinion/op-ed/should-healthcare-be-a-fundamental-right/article31528818.ece

हिंदी अनुवादः प्रेम बहुखंडी

सम्पादकीय सहयोगः जीयानन्द शर्मा

26.05.2020

दो शब्द

कोविड-19 महामारी के दौरान उभरी स्वास्थ्य सेवाओं की खामियों ने देश के सामने कुछ महत्वपूर्ण सवाल खड़े किए हैं और विकास के मॉडल पर भी सवालिया निशान लगे हैं। बुनियादी सेवाओं के निजीकरण और व्यावसायीकरण के कारण आम आदमी किस तरह से हाशिये पर खड़ा है इसका उदाहरण इस संकट के दौर में साफ-साफ नज़र आ रहा है। संकट के दौर में एक भी निजी स्वास्थ्य संस्थान मदद के लिए खड़ा नहीं हुआ। अन्ततः सरकारी अस्पतालों का टूटा-फूटा, जर्जर ढांचा ही महामारी से मुकाबला करने के लिए चट्टान बनकर खड़ा है। सार्वजनिक क्षेत्र के आलोचकों के लिए यहां दुष्यंत कुमार की पंक्तियां याद करना प्रासंगिक होगा कि :

"इस नदी की धार से ठण्डी हवा आती तो है
नाव जर्जर ही सही लहरों से टकराती तो है।
एक चिनगारी कहीं से ढूंढ लाओ दोस्तो,
इस दिये में तेल से भीगी हुई बाती तो है।"

इस समय स्वास्थ्य सेवाओं के सार्वभौमिकरण और स्वास्थ्य के मौलिक अधिकार को लेकर चर्चा फिर से तेज़ होने लगी है। इटली जैसा देश भी स्वास्थ्य सेवाओं का राष्ट्रीयकरण करने को बाध्य हुआ है। जबकि हमारे देश में इस दौर को परोक्ष निजीकरण की दिशा में धकेलने के प्रयास हो रहे हैं।

प्रस्तुत पुस्तिका जन विज्ञान आन्दोलन और जन स्वास्थ्य अभियान के दो बड़े दिग्गजों डॉ. अभय शुक्ला और डॉ. टी. सुन्दररामन से राम्या कन्नन के साथ साक्षात्कार पर आधारित है।

उम्मीद है यह पुस्तिका जन विज्ञान आन्दोलन और जन स्वास्थ्य अभियान के कार्यकर्ताओं के लिए एक स्रोत पुस्तिका की तरह काम करेगी। साथ ही ऐसे लोग जो बुनियादी सेवाओं के निजीकरण के विरोध और सार्वजनिक सेवाओं को मज़बूत करने के पक्षधर हैं, वे भी अपनी जानकारी और समझ में इज़ाफा कर पाएंगे।

आभार

डॉ. ओम प्रकाश भूरेटा

क्या स्वास्थ्य मौलिक अधिकार होना चाहिए?

स्वास्थ्य कभी भी हमारी प्राथमिकताओं में नहीं रहा है। भारत ने कभी भी अपने सकल घरेलू उत्पाद (जी.डी.पी.) का 2 प्रतिशत से अधिक स्वास्थ्य पर खर्च नहीं किया है। देश भर में स्वास्थ्य सेवाएं कार्यक्षमता और पर्याप्तता के मापदंड पर अलग अलग स्तर पर हैं। कोविड-19 महामारी ने देश भर के साथ, केरल और तमिलनाडु जैसे राज्यों को भी झकझोर कर रख दिया है जहाँ पर अन्य राज्यों के मुकाबले स्वास्थ्य सुविधाओं की स्थिति पहले से ही बेहतर हैं।

राम्या कन्नन : कोविड-19 का समाज के ऊपर अभूतपूर्व प्रभाव पड़ा है। जबकी हम यह तर्क दे सकते हैं कि पूरी दुनिया में कोई भी देश इस आपात स्थिति का मुकाबला करने के लिए पूरी तरह से तैयार नहीं था। क्या आपको लगता है कि 'स्वास्थ्य को मौलिक अधिकार' बनाने की मांग उठाने के लिए यह सही समय है।

अभय शुक्ला : बहुत खतरनाक महामारी होने के बावजूद मुझे लगता है कि इसका सकारात्मक प्रभाव यह पड़ा है कि इसने सार्वभौमिक और मज़बूत सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं के महत्व और ज़रूरत के प्रति लोगों की आँखे खोल दी हैं। पहली बार लोगों को महसूस हो रहा है कि हर नागरिक की गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सेवा तक पहुंच होनी चाहिए। चूंकि इस महामारी का दुष्प्रभाव अभी तक महानगरों में ही केंद्रित रहा है और क्योंकि इसने मध्यम वर्ग को भी प्रभावित किया है, इसलिए इसका मुकाबला करना एक उच्च प्राथमिकता का विषय बन गया है।

वास्तव में स्वास्थ्य को मौलिक अधिकार बनाने के एजेण्डें को आगे बढ़ाने का यह सबसे सही समय है। अगर इस एजेण्डें को वास्तविक रुप देना है तो इसे हमेशा सार्वभौमिक (अर्थात सब के लिए समान) बनाना होगा इसलिए स्वास्थ्य का अधिकार एक बहुत महत्वपूर्ण एजेण्डा है और इसे मज़बूती के साथ आगे बढ़ाया जाना चाहिए।

प्रोफेसर सुन्दररमन : हाँ, ये अधिकार का मुद्दा है। इसे बाजार में खरीदी जा सकने वाली वस्तु से अलग करके एक अधिकार की तरह ही माना जाना चाहिए। पारंपरिक अर्थशास्त्र की परिभाषा में स्वास्थ्य एक सार्वजनिक वस्तु है जिसके साथ कई सारे बाह्य कारक/परिणाम जुड़े हुए हैं। अगर आप इस सिद्धांत में विश्वास रखते हैं कि लोगों को सिर्फ न्यूनतम स्वास्थ्य सेवाएं ही मुहैया करवाना सरकार की ज़िम्मेदारी है और शेष सुविधाओं के लिए उन्हें बाजार पर छोड़ दिया जाए तो सरकार शायद राजनैतिक रूप से जनसंख्या के बड़े हिस्से को स्वास्थ्य सेवाएं देने से बच जाए। ऐसा कर के सबको एक बड़ी कीमत सभी को चुकानी पड़ी हए, लेकिन सबसे ज़्यादा कीमत ग़रीब जनता ने ही चुकाई है। इस महामारी की हमें बड़ी कीमत चुकानी पड़ी है, महामारियों से निपटने के लिए की जाने वाली तैयारियों के अभाव के कारण और क्योंकि यह महामारी हर किसी को प्रभावित कर सकती है। इसका असर सिर्फ स्वास्थ्य पर ही नहीं बल्कि पूरी अर्थव्यवस्था पर पड़ता है।

टीकाकरण और कुछ ज़रूरी प्रसवपूर्व स्वास्थ्य जांच व देखभाल मुहैया करवा देना ही काफी नहीं है। हमें बीमारी की निगरानी के लिए एक अच्छे तंत्र की भी आवश्यकता है। हमें एक ऐसी एकीकृत प्राथमिक स्वास्थ्य प्रणाली कि ज़रूरत है जो गांवों तक सेवाएं प्रदान कर सके। हमें ऐसी तृतीयक स्वास्थ्य प्रणाली कि जरूरत है जो परिष्कृत वेंटीलेटर प्रदान कर सके और साथ ही हमें जरूरत है अतिरिक्त क्षमता की (अस्पताल, बिस्तर और स्वास्थ्य कर्मी इत्यादि) जो किसी भी आपातकालीन स्थिति का सामना कर पाए।

राम्या कन्नन : इस महामारी के दौरान अधिक से अधिक उन लोगों तक स्वास्थ्य सेवाओं को पहुँचाने की कल्पना की गई है जो अभी तक इससे अछूते हैं। क्या आपको लगता है कि इससे भारत में गुणवत्तापूर्ण सार्वभौमिक स्वास्थ्य सुविधाएँ पहुंचाए जाने की उम्मीद जगी है और इसके लिए जीडीपी का कितना प्रतिशत खर्च किया जाना आवश्यक है।

अभय शुक्ला : अगर हम आज देशभर की स्थिति देखते हैं तो इस तथ्य के बावजूद, कि सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं में हमेशा से कर्मचारियों विषेश तौर पर डॉक्टरों की कमी रही है और संसाधनों का भी अभाव रहा है, सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाएं कोविड-19 जैसी महामारी की चुनौती से निपटने के लिए सराहनीय रूप से पूरी कोशिश कर रही हैं। और यह बात मैं पूरी ज़िम्मेदारी और विश्वास से कह रहा हूं। विशेषकर केरल राज्य ने अपनी सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं, खासतौर से, प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाओं, के माध्यम से कुशलता पूर्वक महामारी को रोकने में उल्लेखनीय कार्य किया है। अगर हम गौर करें तो अभी तक जनता, विशेषकर मध्यम वर्ग की

नजरों में स्वास्थ्य सेवाओं का आदर्श नमूना बड़े-बड़े निजी अस्पताल हैं। आमतौर पर सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाएं विशेषकर प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाएं अदृश्य और उपेक्षित रही हैं।

लेकिन अब कोविड-19 महामारी में एक अलग तरह की स्थिति सामने आ रही है। सार्वजानिक स्वास्थ्य सेवाओं को लेकर अवाम के नज़रिये में बदलाव दिखाई देने लगा है। यह दौर लोगों की धारणा में बदलाव ला रहा है, या ला सकता है, और यह सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं के जीर्णोद्धार में कामगर साबित हो सकता है। क्योंकि राजनैतिक इच्छाशक्ति जनता की ताकत से ही तय होती है। अगर जनता की समझ बनती है तो सरकारों को भी जवाबदेह होना ही पड़ेगा।

अगर महामारी खत्म होने के बाद भी, यह जागरूकता बरकरार रहती है, तो निःसंदेह आने वाले 5-10 सालों में हम देश के अधिकांश राज्यों में सभी को गुणवत्तापूर्ण स्वास्थ्य सुविधाएं प्रदान कर पाएंगे। जहाँ तक बजट का सवाल है तो सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा और इसके द्वारा संगठित स्वास्थ्य सेवाओं पर जीडीपी का 3-4 प्रतिशत खर्च एक अच्छी शुरूआत होगी ताकि कम से कम बुनियादी सार्वभौमिक स्वास्थ्य सेवा प्रणाली स्थापित की जा सके।

प्रोफेसर सुन्दररामन : मुझे लगता है कि ये महामारी भारत में अभी अपने प्राथमिक चरण में है और इसके फैलने के आसार हैं। हमारा देश जिस प्रकार आर्थिक संकट से जूझ रहा है उससे मैं चिंतित हूं। पश्चिमी देशों में लॉकडाउन का मतलब है सरकार पर भारी आर्थिक बोझ, सरकारों पर सामाजिक सुरक्षा की ज़िम्मेवारी और बेरोज़गारी भत्ते का भुगतान। हमारे देश में हालांकि बहुत राहत सामग्री बांटी गई है पर वो सामाजिक सुरक्षा नहीं है। इससे संकट का अधिकतर भार गरीब तबके पर डाल दिया गया है।

कई राज्यों में यह तरीका अपनाया गया है कि व्यापक, माध्यमिक और तीसरे स्तर की सेवाएं प्रदान करने वाले अस्पतालों को कोविड-19 से ही लड़ने के लिए लगा दिया है। इसके चलते वहाँ पहले से इलाज करवा रहे मरीजों को बाहर कर दिया गया और नतीजतन उन्हें महंगे निजी अस्पतालों में इलाज के लिए जाना पड़ रहा है। मुझे नहीं लगता है कि हमारा लोकतंत्र अभी इतना परिपक्व और मज़बूत हो पाया है कि हम सरकारों से यह कहें कि वह नए अस्पताल बनवाए, बिस्तरों की संख्या बढ़ाए जैसाकि चीन और स्पेन में किया गया। सार्वजनिक प्रणाली को एक अवशिष्ट के रूप में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। भारत में हमें अभी मानव अधिकारों और बुनियादी मुद्दों के प्रति बहुत अधिक मुखर होना पड़ेगा वरना जनता पर लगातार बोझ बढ़ता ही जायेगा। पहले चरण के लॉकडाउन के दौरान स्वास्थ्य क्षेत्र के लिए 15,000 करोड़ रुपये का आबंटन स्वागत योग्य कदम था। लेकिन मेरा मानना यह है कि इस वर्ष के अलावा पिछले 4 वर्षों के दौरान भी नियमित वार्षिक बजट में और ज्यादा आबंटन की आवश्यकता थी। मेरी चिंता है कि जुलाई आते-आते ये बीमारी देश के भीतरी ग्रामीण क्षेत्रों में फैल जाएगी जिस तरीके से 1918 में स्पेनिश फ्लू भारत में फैला था। स्पेनिश फ्लू समुद्री जहाज़ों के कारण मुंबई में फैला था, बहुत समय तक ये सिर्फ मुंबई में ही सिमटा रहा पर धीरे-धीरे ये देश के अन्य हिस्सों में फैल गया।

मुझे उम्मीद है कि निकट भविष्य में सरकार सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं को और अधिक मज़बूत करेगी। क्योंकि निजी क्षेत्र के स्वास्थ्य संस्थानों ने इस महामारी के दौरान मदद करने के बजाय अपने कदम पीछे खींच लिए हैं और मदद की पेशकश करने के बजाय महामारी खत्म होने तक बंद रखना ही बेहतर समझ रहे हैं।

राम्या कन्नन : आप दोनों को सार्वभौमिक स्वास्थ्य नीति बनाने का अनुभव है। आपने 'सभी के लिए स्वास्थ्य' पर सरकार के लिए एक स्वास्थ्य नीति का मसौदा तैयार करने पर भी काम किया है। डॉक्टर शुक्ला शायद आपने महाराष्ट्र में भी इस पर कुछ काम किया है। क्या आप विस्तार से बता सकते हैं कि ये सार्वभौमिक स्वास्थ्य नीति क्या है?

प्रोफेसर सुन्दररामन : मुझे लगता है कि तीन प्रमुख मुद्दों की वजह से हमें अपने पहले के प्रयासों में अभी तक सफलता नहीं मिल पाई है। मैं समझता हूं कि हमें इस दिशा में आगे बढ़ने से पहले इन पुराने तीनों मुद्दों को हल कर लेना चाहिए। सबसे पहले यह समझना ज़रूरी है कि स्वास्थ्य का अधिकार और स्वास्थ्य देखभाल का अधिकार दो अलग-अलग चीज़ें हैं।

स्वास्थ्य का अधिकार कुछ हद तक लागू किया जा सकता है लेकिन फौरी तौर पर स्वास्थ्य देखभाल के अधिकार को आज की परिस्थिति में तत्काल लागू किया जाना चाहिए।

हालाँकि ये सब करने में एक बुनियादी दिक्कत है, और वो ये है कि स्वास्थ्य राज्यों का विषय है। क्या इसे केंद्र की विषय सूची में डाल दिया जाए जिससे स्वास्थ्य के लिए केंद्र का बजट आसानी से मिल सके? लेकिन इस महामारी से निपटने की कोशिशों के दौरान यह स्पष्ट हो गया है कि यह तरीका कारगर नहीं होगा।

कई फैसले राज्य सरकारों को लेने होते हैं जिसके लिए खासा सहयोग चाहिए। हालाँकि राज्य और केंद्र सरकार के बीच धन आबंटन को लेकर एक स्पष्ट समझौता होना चाहिए, पर बहुत कुछ राज्य के अधिकार क्षेत्र में रहने की आवश्यकता है। निःसंदेह इसमें एक बहुत बड़ी समस्या संविधान से सम्बंधित है लेकिन यह अति-केंद्रीयकरण की दिशा में न जाए।

निःसंदेह तीसरा मुद्दा सबसे बुनियादी विषय है, और वो है कि आपको अपने संसाधन वहां लगाने की आवश्यकता है जहाँ उनकी ज़रूरत है। संसाधनों को ज़रूरतों के आधार पर जुटाकर उन्हें राज्यों को भी देना पड़ेगा। इसे सब्सिडी की तरह न दिया जाए। हमें मानना होगा कि यदि आप सबके लिए समान स्वास्थ्य सुविधाएं चाहते हैं तो आपको गरीब और मध्यम वर्ग की स्वास्थ्य देखभाल पर अधिक निवेश करने की आवश्यकता है। शासक वर्ग और साधन सम्पन वर्ग के तबके को इसका भार उठाना पड़ेगा।

अभय शुक्ला : सार्वभौमिक स्वास्थ्य सुविधाओं के लिए हमें एक विशेष प्रणाली की आवश्यकता होगी जोकि स्वास्थ्य सेवाओं के अधिकार का ही एक पूरक होगा। महाराष्ट्र के कुछ जन स्वास्थ्य विशेषज्ञों और स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं ने पिछले तीन वर्षों में ऐसी रूपरेखा तैयार की है जिसे अगले पांच वर्षों में वास्तविक तौर पर हासिल किया जा सकता है। स्पष्ट है कि ये कोई ख्याली पुलाव नहीं है, इसे हासिल किया जा सकता है बशर्ते इसके लिए राजनैतिक इच्छा शक्ति हो।

लेकिन इस प्रकार की व्यवस्था को बनाने के लिए कुछ अड़चने हैं जिन्हें दूर करना होगा। अभी हमारी स्वास्थ्य प्रणाली खंडित या विभाजित है, हमारे यहाँ गरीबों के लिए अलग स्वास्थ्य प्रणाली है, मध्यम वर्ग के लिए अलग और उच्च वर्ग और धनाढ्य वर्ग के लिए अलग ही तरह की स्वास्थ्य व्यवस्था है। हमें इस प्रकार की विभाजित या बिखरी हुई स्वास्थ्य व्यवस्था से निकलकर सभी के लिए एक समान स्वास्थ्य व्यवस्था विकसित करनी होगी। इसलिए महामारी के चले जाने के बाद भी सरकार को निजी अस्पतालों को नियंत्रित करना चाहिए ताकि जरूरत पड़ने पर उनको आम जनता के हित में भी इस्तेमाल किया जा सके। मैं मानता हूं कि कोविड-19 के कारण जो मौका मिला है उसे नहीं गंवाना चाहिए। यह तब तक जारी रहना चाहिए जब तक एक ऐसी सार्वभौमिक स्वास्थ्य प्रणाली न विकसित हो जाये जो निजी क्षेत्र को भी नियंत्रित कर सके।

राम्या कन्नन : प्रोफेसर सुन्दररमन क्या आप निजी क्षेत्र की स्वास्थ्य सेवाओं का आकलन कर सकते हैं। निजी क्षेत्र जोकि बहुत शक्तिशाली है, इस महामारी कोविड-19 में मुख्य भूमिका से पीछे हट कर सिर्फ सहायक की भूमिका में ही दिख रहा है, क्या इसका मतलब हुआ कि भविष्य में भारत में निजी स्वास्थ्य सेवा क्षेत्र की भूमिका में कोई बदलाव आएगा।

प्रोफेसर सुन्दररामन : आज प्रधानमंत्री बीमा योजना (जिसमें बीमा कवर के तहत निजी क्षेत्र के अस्पतालों में इलाज की छूट दी गई है) एक असफल योजना रही है। अभी बिना बीमा कवर वाले लोग जो ज्यादा दाम दे सकते हैं वही निजी क्षेत्र का इस्तेमाल कर रहे हैं। आज, सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली, संकट के इस समय में अपनी अनगिनत समस्याओं के बावजूद काम आ रही है। इस अर्थ में सार्वजनिक स्वास्थ्य में सबसे खराब राज्य भी लोगों के साथ खड़े रहे। लेकिन इसका ये मतलब नहीं है कि निजी क्षेत्र की कोई भूमिका नहीं है। निजी क्षेत्र के लिए अधिक पारदर्शी नियामक व्यवस्था की आवश्यकता है। यह महत्वपूर्ण है कि निजी क्षेत्र सरकारी सेवाओं का विकल्प बनने के बजाए पूरक की भूमिका ही निभाए।

Bharat Gyan Vigyan Samiti

59/5, 3rd Floor Near K- Block, Ravidas Marg,
Kalkaji New Delhi- 110019
Tel.: 011-41022141
e-mail : bgvsdelhi@gmail.com,
Website : www.bgvs.org